मीरांबाई

प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली

ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल

भारतीय विद्या मंदिर

मीरांबाई

प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली

ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल

भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता

■ *प्रकाशक :*

भारतीय विद्या मंदिर
सिम्पलेक्स इंफ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड
12/1 नेल्ली सेनगुप्ता सरणी, कोलकाता -700087

■ *शाखाएँ :*

(1) रतनबिहारी मंदिर,
बीकानेर - 334001

(2) वैकुण्ठ (2 तल्ला) 82-83 नेहरुप्लेस,
नईदिल्ली - 110019

(3) 502/ए, पूनम चेम्बर्स, शिवसागर इस्टेट 'ए' विंग, डॉ. एनीबीसेण्ट रोड़,
मुंबई - 400018

(4) 'सिम्पलेक्स हाउस' 48 कासा मेजर रोड़, एगमोर,
चेन्नई - 600008

■ *प्रमुख वितरक :*

राजस्थानी-ग्रन्थागार
प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता
प्रथम माला, गणेश मंदिर के पास,
सोजती गेट, जोधपुर (राजस्थान)
☎ 0291-2657531, 2623933 (O)
e-mail : info@rgbooks.net,
rgranthagar@satyam.net.in
website: www.rgbooks.net

■ © ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल

■ ISBN - 978-81-89302-41-2

■ पहला संस्करण : 2008
दूसरा संशोधित संस्करण : 2012

■ **मूल्य : ₹ 900.00** (नौ सौ रुपये मात्र)

कम्प्यूटराइजेशनः परिहार–डीटीपी एवं मुद्रण : भारत-प्रिण्टर्स, जोधपुर

Meeranbai : Pramanik Jeewani Aivam Mool Padawali
by Brajendrakumar Singhal
Publisher: **Bharatiya Vidya Mandir, Simplex Infrastructures Ltd.**

Second Revised Edition : 2012

Price : ₹ 900.00

गुणों का समावेश है। अँग्रेज महाशय ने इसकी जो भी प्रशंसा की है वह यथार्थ के धरातल को छूती है क्योंकि इसमें शब्दों का संयोजन भावानुकूल होने से रसोत्पादन करने में सर्वथा सक्षम है। यद्यपि संपूर्ण काव्य में संस्कृतनिष्ठ सामासिक-पदों का प्रयोग अच्छी मात्रा में हुआ है तथापि उनसे रसनिष्पत्ति में तनिक भी रुकावट उत्पन्न नहीं होती। वस्तुतः भाषा में प्रवाह गिरिशृंगों से गिरने वाले प्रपात की भाँति है जो अवरोधों को चीरते हुए अनवरत गिरता ही रहता है। लगता है, 'श्रीप्रेमी' ने उन्हीं तथ्यों तथा मान्यताओं को अपने काव्य के प्रमेय बनाये हैं जिनका उल्लेख भक्तप्रवर नाभाजी महाराज के भक्तमाल तथा उसकी टीकाओं में हुआ है। हाँ, कहीं-कहीं नवीन तथ्यों का समावेश तथा पुराने तथ्यों में हल्का-फुल्का परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होता है। अस्तु!

उक्त चरितामृत मेरे द्वारा वि॰ सं॰ 2034 में उक्त प्रकाशित पुस्तक से लिपिकृत किया गया था। तत्पश्चात् इसको पढ़ने का पुनः अवसर न मिला। वि॰ सं॰ 2057 में मैंने टालनपुर निवासी संत सुखसारण के 'नाम-प्रतीत-भक्तमाल' की टीका लिखी थी जो उसी वर्ष 'परंपरा' त्रैमासिक पत्रिका के 119-120वें संयुक्तांक के रूप में प्रकाशित हुई है। उन्हीं दिनों उदयपुर के डॉ॰ श्रीब्रजमोहनजी जावलिया का मेरे आवास पर पधारना हुआ। चर्चा के मध्य मीरां की बात चल निकली। उन्हें उक्त मीरां-चरितामृत दिखाया तो उन्होंने सुझाया कि मुझे मीरां पर भी लिखना चाहिए। उनके सुझाव के अनुसार मैंने भक्तिमती मीरां पर प्रकाशित-अप्रकाशित सामग्री का संकलन करना प्रारंभ कर दिया। जोधपुर, मेड़ता, द्वारका, अहमदाबाद, मुम्बई, उदयपुर आदि अनेक स्थानों की यात्रा कर अनेक विद्वानों से मीरां पर चर्चा की और सर्वप्रथम प्राचीन कवियों, लेखकों के काव्यों का संकलन कर मीरांबाई को समझने का प्रयत्न किया। तत्पश्चात् मीरांबाई पर लिखी गई लगभग-लगभग सभी आलोचनात्मक पुस्तकों तथा इतिहास ग्रंथों का संकलन कर उन्हें पढ़ा जिसका परिणाम वर्तमान मीरां-चरितामृत है। मूलतः यह चरितामृत 300 से भी अधिक ए 4 आकारीय पृष्ठों में लिखा गया था किन्तु वर्तमान प्रकाशक के अनुरोध पर संक्षिप्त करके लगभग एक तिहाई पृष्ठों में 25 प्रकरणों में विभक्त करके पुनः लिखा गया है। मीरां की भक्ति, मीरां का विरहयोग, मीरां की भाषा, मीरां का धार्मिक-सामाजिक दातव्य, मीरां का भक्त समाज में स्थान, मीरां का इतिहास में स्थान, मीरां का स्त्री जाति को दाय, मीरां द्वारा सेवित मूर्तियाँ आदि अनेक प्रकरण स्थान की सीमितता के कारण छोड़ने पड़ रहे हैं। उन्हें फिर कभी प्रकाशित किया जायेगा।

उक्त 25 प्रकरणों को लिखते समय प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रंथों - मुंहता नैणसी री ख्यात, मारवाड़ रा परगणां री विगत, बांकीदास री ख्यात, राठौड़ां री ख्यात (मुरारीदान की ख्यात), वीरविनोद, उदयपुर राज का इतिहास, मारवाड़ राज का इतिहास, मारवाड़ का इतिहास, राजस्थान का इतिहास, राजस्थान का सांस्कृतिक

इतिहास जैसे अनेकों ऐतिहासिक ग्रंथों के साथ-साथ भक्तमाल, उसकी टीकाओं, परची, लावणी, बारामासी, मीरां आदि अनेक प्राचीन स्रोतों सहित आधुनिक-काल में मीरांबाई पर लिखे गये लगभग-लगभग सभी समालोचनात्मक ग्रंथों को पढ़कर उनकी यथास्थान समालोचना की गई है।

मुण्डकोपनिषद् में कहा गया है **'ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति'** परब्रह्म-परमात्मा का अपरोक्षानुभव करके साधक ब्रह्म रूप हो जाता है। परात्पर-परब्रह्म श्रीकृष्ण को पाकर मीरांबाई भी श्रीकृष्ण रूप ही हो गई थीं । कहा जाता है, 'साधक जब ब्रह्मरूप हो जाता है तब उसके मुख से अपरोक्षानुभूतिजन्य वचन उसीप्रकार निकलते हैं जिसप्रकार सृष्ट्यारंभ में वेदों का प्राकट्य परब्रह्म-परमात्मा के श्रीमुख से हुआ था।' ये वचन भी वेद-वाक्य सदृश ही होते हैं और इनमें भी भव-भय-छेदन की उतनी ही सामर्थ्य होती है जितनी वेद वाक्यों में होती है।

''ब्रह्म रूप अहि ब्रह्मवित, ताकी वाणी वेद।
भाषा अथवा संस्कृत, करत भेद भ्रम छेद॥'' - 3.10 विचारसागर।

श्रीकृष्ण रूप हुई मीरां के मुख से वाणी का प्राकट्य न होता, असंभव है क्योंकि श्रीकृष्ण की अपरोक्षानुभूति, वाणी को जागृत कर ही देती है और साधक को अपने अनुभवों को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित भी करती है। कबीर, दादू, रैदास, नृसिंह आदि प्रसिद्ध संत और भक्तों की वाणियाँ इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। भक्तप्रवर नरसिंह मेहता ने कहा है -

'अचेत, चेतन थयो, भव तणो अघ गयो, स्तुति ऊठी मारी आद वाणी।'

मीरांबाई के पदों का संग्रह, उनके जीवनकाल का आज दिन तक नहीं मिला है। अतः उन्होंने कितने पदों का निर्माण किया, कहना सर्वथा अशक्य है। उनके पदों की ठीक-ठाक विषयवस्तु और भाषा क्या थी, कहना भी कम दुरूह काम नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रामाणिक-पदावली किसे कहा जाए, अनसुलझा प्रश्न रह जाता है। फिरभी सुधी विद्वानों ने इस ओर गंभीर प्रयत्न किये हैं और मीरांबाई के शताधिक पदों का संकलन कर प्रकाशन कराया है।

मैंने प्राचीनतम हस्तलिखित ग्रंथों में संकलित पदों को ही प्रामाणिक मानकर उनका संकलन व सम्पादन प्रस्तुत ग्रंथ में किया है तथा उनके सम्भावित और प्रचलित रूप भी दिए हैं। पदों की टीका की गई है। टीका करते समय अनेक संस्कृत-हिन्दी ग्रंथों के सटीक उद्धरण उद्धृत किये गये हैं। मैं उन-उन टीकाकारों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिनकी टीकाओं को मैंने उद्धृत किया है। मैं उन सभी ज्ञात-अज्ञात लेखकों-विचारकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने मीरां विषयक कार्य किया है।

- ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल
60/60, रजतपथ, मानसरोवर,
जयपुर (राज॰)।

उपोद्घात (द्वितीय-संस्करण)

'मेरे तो गिरधर गोपाल' का दूसरा संस्करण नये नाम **'मीरांबाई : प्रामाणिक जीवनी एवम् मूल पदावली'** के नाम से पाठकों के हाथों में सौंपते हुए मुझे अत्यधिक प्रसन्नता की अनुभूति होरही है। यदि मैं अन्यान्य पुस्तकों को तैयार करने में न लगा होता (इसके प्रकाशित होने के पश्चात् इस 4 वर्ष की कालावधि में 15 पुस्तकें और प्रकाशित होगईं) तो इस पुस्तक का यह दूसरा संस्करण ईस्वी सन् 2008 के अंत तक ही आगया होता क्योंकि ईस्वी सन् 2008 के प्रारम्भ में प्रकाशित इसका प्रथम संस्करण मात्र 3-4 महिनों में ही खप गया।

प्रथम संस्करण के समय मैंने लिखा था कि अगले संस्करण में कुछ सामग्री और जोड़ी जायेगी किन्तु जैसा ऊपर लिखा है अन्यान्य पुस्तकों को तैयार करने में लग जाने से मैं ऐसा नहीं कर सका। हाँ, इस संस्करण में उस स्रोत सामग्री को परिशिष्ट - 1 के रूप में अवश्य जोड़ दी गई है जो पहले से ही तैयार थी तथा जिसका प्रकाशन वैचारिकी के 22वें वर्ष के प्रथमांक में हुआ था।

परिशिष्ट - 2 में उन पत्रों व समीक्षाओं के अंशों को प्रकाशित किया जारहा है जो लेखक को प्राप्त हुए व पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। प्रथम-संस्करण में यत्र-तत्र जो दो-चार भूलें रह गई थीं उनका परिमार्जन कर दिया गया है। प्रूफ सम्बन्धी अशुद्धियों को भी शुद्ध कर दिया है। प्रबुद्ध पाठकों का आभार कि जिन्होंने भूलों की ओर ध्यान आकर्षित कराया। पाठकों का आभार इसीलिए भी कि उन्होंने पुस्तक को हाथों-हाथ अपनाया जिसके कारण प्रथम संस्करण मात्र 3-4 महिने में ही समाप्त प्रायः होगया।

- ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल
60/60, रजतपथ, मानसरोवर,
जयपुर (राज॰)।